Research Ambition
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer-reviewed & Open Access) **Journal home page:** www.researchambition.com
ISSN: 2456-0146, Vol. 09, Issue-IV, Feb. 2025

डॉ0 लोहिया के चिन्तन में जातिः एक समीक्षात्मक अध्ययन
(An Analytical Study of Caste in Dr. Lohia's Thought)

Dr. Prakash Keshav[a,*]

[a]*Assistant Professor, G.D. College Sheohar, Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur, Bihar, (India).*

KEYWORDS

डॉ. राममनोहर लोहिया, जाति व्यवस्था, सामाजिक समानता, सामाजिक न्याय, जाति उन्मूलन, समतामूलक समाज, भेदभाव रहित समाज।

ABSTRACT

डॉ. राममनोहर लोहिया भारतीय समाज के उन मनीषियों में से थे जिन्होंने जाति–प्रथा को समाप्त करने और समाज में समता स्थापित करने के लिए गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया। उनके विचार जाति आधारित भेदभाव और सामाजिक विषमता के उन्मूलन पर केंद्रित थे। लोहिया ने जाति व्यवस्था को समाज की प्रगति के मार्ग में एक प्रमुख बाधा माना और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुधारों के माध्यम से जातीय भेदभाव को समाप्त करने की वकालत की। यह अध्ययन डॉ. लोहिया के जाति संबंधी विचारों का समीक्षात्मक विश्लेषण करते हुए उनके चिंतन की गहराई और उसके व्यावहारिक पक्ष को उजागर करता है। साथ ही, यह उनके दृष्टिकोण की वर्तमान भारतीय समाज में प्रासंगिकता और चुनौतियों का मूल्यांकन करता है। इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि जाति व्यवस्था के उन्मूलन और समतामूलक समाज की स्थापना में डॉ. लोहिया के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण और मार्गदर्शक हैं।

गैर–बराबरी को लेकर बेचैनी और समरसता की खोज ने लोहिया को राजनीति तक ही सीमित न रखकर समाज और संस्कृति के सम्बन्ध में देश के हालातों पर चिंतन करने को मजबूर किया। उन्होंने जातिवाद, मार्क्सवाद, गांधीवाद, लिंग, भाषा, शिल्प, इतिहास, समाजवाद, खेल, अर्थशास्त्र और दर्शन जैसे विषयों पर विस्तार से अपने विचार प्रकट किए और नई सभ्यता के रूप में समाज की परिकल्पना की। उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़ियों को बखूबी पहचाना और उन पर मुखरता से लिखा भी। लोहिया ने अपने समय से आगे बढ़कर चिंतन किया और भावी बदलाव की बयार बहुत पहले ही ला दी थीं (शर्मा, 2021)।

समाजवादी विचारधारा के मूल–स्तम्भ डॉ0 राममनोहर लोहिया का जीवन श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों एवं अनुपम योग्यता से पूरित था। सप्तक्रांति सिद्धांत के जनक डॉ0 लोहिया को आज भी लोग 'जनतंत्र', 'न्याय' और 'समानता' का सबसे बड़ा हिमायती मानते हैं। इनके विषय में गणेश मन्त्री का कहना है, ''लोहिया गाँधी नहीं थे। वे किसी की अनुकृति हो भी नहीं सकते थे। वे मार्क्स भी नहीं थे। लोहिया को भी मार्क्स की तरह इतिहास की अंतर्धारा और सभ्यताओं की उथल–पुथल को समझने में गहरी दिलचस्पी थी, लेकिन मनुष्य–इतिहास को किसी खास लौह–नियम या विचार–साँचे में जकड़कर देखने–रखने की उनकी कोई इच्छा नहीं रही। इसी कारण लोहिया अनेक नये विचारों के प्रतिपादक और व्याख्याता तो रहे, परंतु किसी एक बंद विचार–प्रणाली के निर्माता नहीं बने'' (मन्त्री, 1983:129)। डॉ0 लोहिया एक महान समाजवादी थे, जो जनतान्त्रिक

Corresponding author
****E-mail:** prakashkeshavmfp12@gmail.com (Dr. Prakash Keshav). https://orcid.org/0009-0007-8863-2625
DOI: https://doi.org/10.53724/ambition/v9n4.02
Received 10th Dec. 2024; Accepted 25th Jan. 2025
Available online 28th February 2025
2456-0146 /© 2025 The Journal. Publisher: Welfare Universe. This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

समाजवाद की विचारधारा में विश्वास रखते थे। वे जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों को संसदीय साधनों द्वारा सत्ता दिये जाने के पक्षधर तथा सभी प्रकार के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक अन्याय के विरुद्ध अहिंसक सीधी कार्यवाही के पक्षधर थे। वे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा वैचारिक समस्याओं के प्रति अव्यवहारिक रवैये के एकदम विरुद्ध थे। वे सभी प्रकार के अन्याय के विरुद्ध लड़ने वाले अनथक योद्धा थे। उन्होंने समाज के दलित वर्गों को सामाजिक समानता तथा विशेष अवसर प्रदान करने की पुरजोर वकालत की ताकि वे सदियों से चले आ रहे कष्टों से छुटकारा पा सकें (कश्यप, 1990:3)।

डॉ0 लोहिया वास्तव में समानता के जबरदस्त समर्थक थे। उनका यह मत था कि जाति–व्यवस्था तथा वर्गवाद ही भारत के पतन का प्रमुख कारण रहा है। इसी बात को ध्यान में रखकर उन्होंने 'जाति–उन्मूलन' आन्दोलन प्रारम्भ किया था। इस सम्बन्ध में उनका कहना था कि परम्परागत असमानता पर आधारित समाज में सभी लोगों को केवल समान अवसर प्रदान कर ही समानता नहीं लाई जा सकती, इसके लिए समाज के वंचित और कमजोर लोगों को विशेष अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। उन्होंने जोर देकर कहा कि पिछड़े वर्ग के लोगों, महिलाओं, हरिजनों, आदिवासियों एवं अविकसित अल्पसंख्यकों को जब विशेष अवसर प्रदान किये जायेंगे तभी वे तरक्की के स्तर पर पहुँच पायेंगे (रेड्डी, 1990:16–17)।

लोहिया (1955:37) ने वर्ग और वर्ण में भेद को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि जन्मजात वर्गीकरण या धर्म द्वारा उसकी मान्यता वर्णों का आवश्यक गुण नहीं है। वर्ग से वर्ण की मित्रता उस स्थिरता से होती है जो वर्ग–सम्बन्धों में आ जाती है। अस्थिर वर्ण को वर्ग कहते हैं और स्थायी वर्ग वर्ण हो जाता है। हर सभ्यता या समाज में वर्ग से वर्ण और वर्ण से वर्ग का यह बदलाव होता रहा है। यही परिवर्तन लगभग सभी आन्तरिक घटनाओं की जड़ में होता है। यह करीब–करीब हमेशा ही न्याय और बराबरी की माँगों से प्रेरित होता है।

लोहिया ने जाति और वर्ग को ऐसी शक्ति के रूप में पहचाना है जो इतिहास को गति देते हैं। लोहिया मानते हैं कि जाति और वर्ग में टकराव और खींचतान चलती रहती है और इसी टकराव के साथ इतिहास आगे बढता है। जहाँ जाति एक रूढिवादी शक्ति है जो ज़डता या परंपरावाद को बढावा देती है जबकि वर्ग एक गतिशील शक्ति है जो समाज में गतिशीलता को बढावा देती है। आप अपनी जाति को बदल नही सकते, किंतु वर्ग में बदलाव कर सकते हैं। जिस तरह काल मार्क्स आज तक के इतिहास को वर्ग संघर्ष के रूप में देखते हैं उसी तरह लोहिया आज तक के इतिहास को जातियों और वर्गों के निर्माण और विलय के रूप में देखते है। जातियां कमजोर होकर वर्गों का रूप धारण कर लेती हैं और वर्ग मजबूत होकर जातियों का रूप धारण कर लेते हैं (गाबा, 2013:178)।

भारत में जन्म आधारित स्तरीकरण के सबसे महत्वपूर्ण मापदण्ड ''जाति व्यवस्था'' के बारे में डॉ0 लोहिया का कहना था कि भारतीय समाज में जाति–प्रथा सबसे विनाशकारी है। जो लोग सिद्धान्त में उसे नहीं मानते, वे भी व्यवहार में उस पर चलते हैं। जाति की सीमा के अन्दर जीवन चलता है। जीवन के बड़े तथ्य जैसे जन्म, मृत्यु, शादी, ब्याह, भोज और अन्य सभी रस्में जाति के चौखटे में होती है। उसी जाति के लोग इन निर्णायक कर्मो में एक–दूसरे की मदद करते हैं। वे जाति–प्रथा को भारतीय समाज का कोढ़ मानते थे, जिसने जहाँ एक ओर शूद्रों के जीवन को नरक बनाया है, वहीं दूसरी ओर नारी जगत की भी दुर्दशा हई है। वर्ण व्यवस्था ने जाति–प्रथा को जन्म दिया और छुआछूत तथा ऊँच–नीच की भावनाओं को फैलाया। इस प्रकार जाति समाज में असमानता उत्पन्न करती है (गौतम, 2013:217)।

लोहिया (1955:48) ने जाति को जड़वर्ग की संज्ञा दी, क्योंकि उनका मानना था कि जाति की जकड़न ने भारतीय सामाजिक जीवन को प्राणहीन कर दिया है। लोहिया ने यह महसूस किया कि भारत इतने समय तक वर्ण–व्यवस्था के फलस्वरूप पिछड़ापन की स्थिति में रहा है अब आंतरिक असमानता को समाप्त करने का संघर्ष प्रारम्भ हो गया है। लोहिया ने वर्ण और जाति में कोई भेद नहीं किया। उन्होंने यह भी माना कि वर्ण अथवा जाति का आधार स्वभाव तथा कर्त्तव्य विभाजन है (दीक्षित, 2013:49)। लोहिया (1954:79) ने स्पष्ट रूप से माना कि विचार और कार्य में विचित्र अलगाव भारतीय संस्कृति की एक तथ्यतः विशेषता है, जिसका मूल कारण जाति व्यवस्था है। जाति एक अपरिवर्तनीय संरचना है जो विचार और कर्म में दोगलापन प्रदर्शित करता है।

लोहिया (1963) ने जाति–प्रथा के कुप्रभाव की चर्चा करते हुए *''मार्क्स, गाँधी और समाजवाद''* में लिखा है कि 'जाति अवसर को सीमित करती है, सीमित अवसर योग्यता को संकुचित कर देता है, संकुचित योग्यता अवसर को और आगे रोकती है, जहाँ जाति का प्रभुत्व है, वहाँ अवसर और योग्यता लोगों के संकुचित दायरों में और अधिक सीमित होती चली जाते है।' डॉ0 लोहिया का मत है कि जाति–प्रथा ने कमजोर वर्गों को न केवल आर्थिक असमानता का शिकार बनाया है, बल्कि उन्हें सामाजिक एवं राजनीतिक समता से भी वंचित रखा है।

जाति व्यवस्था के बारे में उनका कहना था कि 'इस व्यवस्था ने इंसानी बन्दरों और आम आदमी की ऊपर उठने की कुदरती सूझ–बूझ और ताकत को बेजान बना दिया है। पूरे का पूरा सामाजिक संतुलन जातिवाद के कैंसर ने बरबाद कर दिया है। ऊँची जात वाले को भीख माँगते हुए कोई शर्म महसूस नहीं होती, बल्कि अपना काम अपने–आप करने में उन्हें लज्जा और अपमान महसूस होता है। जातिवाद समाज–जीवन की बुराईयों के ढँकने वाली चादर का का काम कर रही है (शर्मा, 1990:60)।

लोहिया का कहना था कि भारतीय समाज हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई के नाम पर विभाजित है। वहीं हिन्दू समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, व शूद्र जातियों में विभाजित है। इन जातियों में भी अनेकानेक उप–जातियाँ हैं। ये समस्त उप–जातियाँ यहाँ तक विभाजित हैं कि वे एक–दूसरे के साथ शादी–विवाह, खान–पान, अथवा जन्म सम्बन्ध करना अपना अपमान समझते हैं (दीक्षित, 2013:49)।

लोहिया के अनुसार ब्राह्मणी संस्कृति और ब्राह्मणवाद सामन्तवाद और पूँजीवाद का पोषक तथा जनक है। अतः जब तक यहाँ ब्राह्मणवाद और बनियावाद का मूलोच्छेदन नहीं होता है, समाजवाद की कल्पना केवल स्वपन की वस्तु बनकर रह जायेगी। लोहिया के इस विचार में भले ही कटुता का कुछ अंश अधिक हो, किन्तु इस सत्य से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि भारतीय जनता पर इस प्रथा को थोपने वाले उच्च जाति के कुछ ऐसे व्यक्ति रहे, जिन्होंने ऐसी व्यवस्था निर्मित की जिसमें देश के मस्तिष्क का राजा ब्राह्मण और धन का मालिक वैश्य बन बैठा तथा युद्ध एवं सेवाश्रम का उत्तरदायित्व क्रमशः क्षत्रिय एवं शूद्र। लोहिया ने इतिहास के सूक्ष्म अध्ययन द्वारा यह सिद्ध किया है कि भारत की 1000 वर्ष की दासता का कारण जाति है (दीक्षित, 2013:49–50)। डॉ0 लोहिया (1954:79) के अनुसार जाति–प्रथा परिवर्तन के विरूद्ध है और यह यथास्थिति बनाये रखना चाहती है।

लोहिया (1954) के अनुसार जातियों में सामान्यतः गतिहीनता और निष्क्रियता पाई जाती है। जब कि वर्ग सामाजिक गतिशीलता की प्रचण्ड शक्तियों के प्रतिनिधि होते हैं। वर्ग संगठित होकर जातियों का रूप धारण कर लेते है। और जातियाँ वर्गो में परिणत हो जाती हैं। मानव जाति का अब तक का इतिहास जातियों ओर वर्गो के बीच आंतरिक संघर्षो का इतिहास है।

डॉ0 लोहिया (1966:16) का कहना था कि हम एक तरफ

तो अद्वैतवाद चला रहे हैं कि संसार एक है, सब समान हैं, पेड़ समान, गन्ध समान, आदमी समान, देवता समान और दूसरी तरफ, अपने ही अन्दर ब्राह्मण, बनिया, चमार, भंगी, कहार, कापू, माला, माहीगा, और न जाने कितनी तरह जातियाँ बनाकर आपस में बँटवारा करके देश को छिन्न–भिन्न कर रहे हैं। वास्तव में जाति के आधार पर ऊँच–नीच और बड़े–छोटे का द्वैत बहुत ही विडम्बनापूर्ण है और विशेषतः भारत के लिए, जहाँ *'वसुधैव कुटुम्बकम'* ही सम्पूर्ण संस्कृति का आधार रहा हो। यद्यपि, हम निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकते कि जाति–प्रथा के नष्ट होने से सच्चा अद्वैतवाद प्राप्त हो जायेगा, परन्तु इतना अवश्य है कि जाति–प्रथा एक अत्यन्त सशक्त विभाजक शक्ति है जिसके उन्मूलन की अत्यन्त आवश्यकता है।

लोहिया (1954) ने स्पष्ट किया कि जाति–प्रथा के कारण प्रायः छोटी जातियाँ सार्वजनिक जीवन से बहिष्कृत की जाती है, जिससे दासता उत्पन्न होती है और दासता से हर प्रकार का शोषण होता है। जाति–प्रथा के कारण छोटी जातियाँ इतनी अधिक गरीब हो गयी हैं कि वे अपने पूर्ण क्षमता के साथ राष्ट्रीय प्रगति में अपना सहयोग नहीं दे पाती। लोहिया (1954:4) के अनुसार जाति–प्रथा भेद–भाव को जन्म देकर समाज को विघटित करती है। जाति–प्रथा से आत्मीयता और सौहार्द की समाप्ती हो जाती है। सहयोग की अनुपस्थिति के कारण सामाजिकता का लोप हो जाता है और राष्ट्रीय विकास अवरूद्ध हो जाता है। सामाजिक दृष्टि से उन्होंने दो उपचारों को रखा– प्रथम सहभोज और द्वितीय अन्तरजार्तिय विवाह। सहभोज के संबंध में उनका विश्वास था कि विभिन्न छोटी–बड़ी जातियों के हजारों व्यक्ति सहभोज में सम्मिलित होकर जाति–नाश हेतु जनपद को प्रभावशाली ढंग से प्रभावित कर सकते हैं और उन्होंने हैदराबाद में ऐसा किया भी था। इस संबंध में उनका दूसरा सुझाव था–अन्तरजातिय विवाह। अन्तरजातिय विवाह का तात्पर्य द्विजों का आपस में विवाह नहीं, अपितु द्विज अद्विज का विवाह है। साक्षात्कार सिद्धांत के प्रतिपादक होने के नाते वे इन सुझावों को भी तुरन्त कार्य रूप देने पर बल देते थे। उन्होंने शादी–विवाह, भोज–रस्म, रीति–रिवाज सभी में उच्च जातियों की पृथकतावादी नीति की कठोर आलोचना की और इस प्रकार के सिद्धांत और कर्म प्रतिष्ठित किये जिनमें हरिजन, शूद्र तथा उच्च जातियाँ सब की सब एक ही गृह के सदस्यों की तरह जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। उनका कहना था कि ''जिस दिन प्रशासन और फौज में भर्ती के लिए शूद्र और द्विज के बीच विवाह को योग्यता और सहभोज के लिए इनकार करने पर अयोग्यता मानी जायेगी, उस दिन जाति पर सही मानी में हमला शुरू होगा। वह दिन अभी आना बाकी है''।

लोहिया वर्ण व्यवस्था को समाज का एक कोढ़ मानते थे। आपने वर्ण और जाति में कोई भेद नही किया। डॉ0 लोहिया का कहना था कि 'वर्ण व्यवस्था बल द्वारा निर्मित व्यवस्था है जिसमें गुण कर्म का कोई महत्व नहीं है।' जाति एक अपरिवर्तनीय संरचना है जो विचार और कर्म में दोगलापन प्रस्तुत करती है। जाति प्रथा के उन्मूलन के लिये लोहिया ने अन्तर्जातीय विवाहों और सहभोजों को महत्व दिया। आपका कहना था कि समाज और प्रशासन को इन्हें कड़ाई से लागू करना चाहिए। जातिप्रथा के उन्मूलन की दिशा में लोहिया ने ब्रह्मज्ञान और अद्वैतवाद की उपयोगिता को स्वीकार किया। आर्थिक दृष्टि से भी लोहिया ने जाति प्रथा को तोड़ने के साथ ही उन्होंने कमजोर तथा पिछड़ी जातियों को आर्थिक रूप से सबल बनाने और उनमें आत्मविश्वास की भावना जाग्रत करने की आवश्यकता पर बल दिया।

लोहिया (1962:139) का जाति प्रथा पर चौथा प्रहार राजकीय था। उनका कहना था कि जाति–प्रथा के कारण जनता का अधिकांश भाग राजनीतिक कार्य में सक्रिय भगा नहीं ले पाता। अपवादों को छोड़कर निम्न

जातियों में से नेतृत्व का सृजन भी नहीं हो पाता है। अपनी दबी हुई स्थिति के कारण वे अपने मताधिकार का भी प्रयोग नहीं कर पाते। उनका न तो सही ढंग से प्रतिनिधित्व हो पाता है और न ही उन्हें किसी प्रकार का राजनीतिक ज्ञान ही। इन समस्त कारणों से उनकी क्षमता विकसित नहीं हो पाती। जिस कारण वे राजनीतिक कार्यो से उदासीन हो जाते हैं। परिणामस्वरूप राष्ट्र जनता के अधिकांश भाग के सहयोग से वंचित हो जाता है। उनमें राजनीतिक चेतना भरने और राष्ट्र को सशक्त बनाने के लिए लोहिया ने प्रत्यक्ष चुनाव, वयस्क मताधिकार और विशेष अवसर के सिद्धांत की आवश्यकता पर बल दिया।

भारतीय समाज के लिए जाति–प्रथा सदैव से एक गम्भीर समस्या रही है। लोहिया (1954:83) ने लिखा है कि ''भारतीय जीवन में जाति सबसे ज्यादा ले–डूबा उपादान है''। उनका मत है कि विश्व–पंचायत में बराबरी हासिल करने का सपना साकार करने के लिए द्विजों को अपने 22 करोड़ भाईयों को व्यक्तित्ववान बनाना आवश्यक है (लोहिया, 1954:35)।

लोहिया (1963) का कहना था कि नई आर्थिक नीतियों के चलते देश में विकास तो अधिक विकास होता जायेगा, लेकिन अगर हमने जाति के आधार को नहीं बदला तो गैर–बराबरी की प्रथा चलती रहेगी। ऐसे में देश के विकास का मतलब, भारत में जाति प्रथा के रहते हुए गैर–बराबरी का बढ़ना ही होगा। विशेष अवसर एवं आरक्षण व्यवस्था को पूरी इमानदारी से लागू न किये जाने पर अपना विरोध प्रकट करते हुए डॉ0 लोहिया ने कहा कि 'या तो हम अपने संविधान में से संरक्षण वाली बात को बिल्कुल समाप्त कर दें और ईमानदारी के साथ कहें कि हम हरिजनों, आदिवासियों और दूसरे पिछड़े सामाजिक समूहों को कोई अवसर नहीं देना चाहते और अगर उसको रखते हैं तो फिर इमानदारी के साथ उतनी जगहें उनको दे देनी चाहिए, चाहे वे योग्य हों या अयोग्य'।

डॉ0 लोहिया जाति प्रथा के प्रबल विरोधी थे। उनके अनुसार जाति प्रथा समाजवाद के मार्ग का मुख्य अवरोधक है। जाति समाज में असमानता उत्पन्न करती है। डॉ0 लोहिया ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है, ''जीवन के बड़े–बड़े तथ्य जन्म, मृत्यु, शादी, भोज–ब्याह, और सभी रस्में, जाति के चौखट में होती है। ऐसे मौकों पर दूसरी जाति के लोग किनारे पर रहते हैं, जैसे वे तमाशबीन हों'' जाति प्रथा के कारण निम्न वर्ग शोषण का शिकार बनते हैं, जाति उन्हें उन्नति के अवसरों से अलग रहती है।

लोहिया की मान्यता थी कि जातिवाद का भयानक दलदल इतना गहरा है कि बड़ा से बड़ा पत्थर इसके गर्भ में कहाँ चला जाता है, कुछ भी पता नहीं चलता है। इस जाति प्रथा के दलदल को समाप्त करने के लिए लोहिया जन–आंदोलन की आवश्यकता महसूस करते हैं। उनका कहना था कि समाज के दबे हुए समुदायों को, उनकी योग्यता आज जैसी भी हो, उसका लिहाज किए बिना, उन्हें नेतृत्व के स्थानों पर बैठाना इस आन्दोलन का लक्ष्य होना चाहिए (कपूर, 2008)।

लोहिया (1954) का कहना था कि अगर आप चाहते हो कि कोई एक व्यक्ति ही सुखी न हो, बल्कि सभी सुखी हों तो फिर इस जाति के चक्र को तोड़ना ही होगा। यह तभी हो सकता है, जब किसी एक जाति के अधिकार को कम करके दूसरी जाति को बिठाने के बजाय कोशिश यह की जाये कि सब लोगों के अधिकार करीब–करीब बराबर हो जायें।

लोहिया ने समकालीन भारत की शक्ति संरचना में असमानताओं, बहिष्करणों और शोषण को समझने के लिए एक अंतर–वर्गवादी दृष्टिकोण का निर्माण (कुमार, 2010:64)। लोहिया (1953) के अनुसार, वे सभी जो सोचते हैं कि आधुनिक अर्थव्यवस्था के माध्यम से गरीबी हटाने के साथ, जाति और लिंग का अलगाव, स्वचालित

रूप से गायब हो जाएगा, वे एक बड़ी गलती करते हैं। गरीबी और जाति व लिंग के अलगाव धरती पर दूसरे अन्यायों को पनपते में सहायता देते हैं। भारत में सामाजिक असमानता का उनका विश्लेषण जाति, वर्ग और लिंग की तिकड़ी पर केंद्रित था। लोहिया ने 'भारतीय समाज को पुनर्जीवित करने और जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं को समानता देने' के बीच एक सीधा संबंध की अवधारणा दी (कुमार, 2010:66)। एक साथ क्रांतियों का उनका सिद्धान्त सामाजिक जीवन के विभिन्न आयामों की स्वायत्तता पर जोर देता है जिसके लिए क्रांतिकारी परिवर्तन की आवश्यकता होती है (यादव, 2010: 99)।

लोहिया उदारवादी हिन्दुत्व के हिमायती थे और यह मानते थे कि अनुदार हिन्दुत्व देश की एकता को भी विच्छन्न कर सकता है। अनुदार हिन्दुत्व जाति, स्त्री, सम्पत्ति और अन्य धर्मानुयायियों के सम्बन्ध में जो दृष्टिकोण रखता है उसी को डॉ0 लोहिया हिन्दू समाज और भारत के लिए दुर्भाग्यपूर्ण मानते थे। वे उस दृष्टिकोण को समता–विरोधी भी कहते थे और अदूरदर्शितापूर्ण भी। नर–नारी समता, जाति–विहीन समाज व्यवस्था और सम्पत्ति के प्रति मोह के त्याग को वे उदार हिन्दुत्व के लक्षण मानते थे। वे पुरुषों से आशा करते थे कि वे नारियों को हर हालत में अपने बराबर का दर्जा दें। जाति–प्रथा को केवल भारत को बार–बार बाँटने का ही दोषी नहीं मानते थें, बल्कि जब वे देखते थे कि उदार हिन्दू मानसिक तौर पर उदार मूल्यों को मान लेता है तो उसका कारण भी जाति का बन्धन ही है। सम्पत्ति के मोह के सम्बन्ध में तो उनका अपना जीवन एक सटीक और अनुकरणीय उदाहरण है। भारतीय धर्म, वेद, पुराण और परम्परा को वे सामाजिक प्रक्रियाओं के माध्यम से देखते थे जिनसे किसी भी जाति का निर्माण होता है। भारतीय परम्परा को दूसरे देशों की परम्पराओं से समन्वय करके उनके बीच से एक ऐसी परम्परा की तलाश करना चाहते थे, जो देश, जाति, वर्ग आदि परे एक विश्वस्तरीय परम्परा हो (लोहिया, 1954: 24)।

लोहिया सामाजिक, आर्थिक, शिक्षा एवं स्वास्थ्य में समानता के सिद्धान्त पर बल देते थे। किसी भी प्रकार की असमानता या विषमता उन्हें अभीष्ट न थी। उनका मानना था कि समाज के निर्बल, शोषित, दमित लोगों को समानता के विशेष अवसर देकर ऊपर उठाया जाए, क्योंकि हजारों वर्ष की अमीरी–गरीबी मात्र अवसर की समानता से ही समाप्त नहीं होगी (यादव, 2019)।

डॉ0 लोहिया ने हमेशा ही जाति से ऊपर उठकर एक ऐसे समाज की परिकल्पना की है जिसमें सभी एक समान हों। उनका कहना था कि भारत में जातिप्रथा तथा वर्ण–व्यवस्था के नाम पर जो सामाजिक एवं आर्थिक असमानता हैं, उसे समाप्त करने के लिए क्रांति की जरूरत हैं।

डॉ0 लोहिया दलितों, पीड़ितों एवं शोषितों के मसीहा तथा किसानों, मजदूरों एवं महिलाओं के शुभ–चिन्तक के रूप में सदैव प्रसिद्ध रहे। वास्तव में डॉ0 लोहिया ने समाजसेवा और समाजवाद के स्थापन में अपने जीवन का लक्ष्य बनाया था, जिसके लिए वे जीवन–पर्यन्त संघर्षरत् रहे (रेड्डी, 1990:14)।

'मानव जाति के इतिहास में दुनिया को बदलने और बेहतर बनाने की कई कोशिशें हुई हैं। पहले ये कोशिशें ज्यादातर धार्मिक और दार्शनिक तौर पर हुई हैं। आधुनिक काल में भौतिक एवं आर्थिक व्यवस्था बदल कर नई दुनिया बनाने की कोशिश की गयी। दोनों तरह की कोशिशें एकांगी थीं और इसीलिए ज्यादा सफल और टिकाऊ नहीं हो पाईं। ऐसे वैचारिक धुंध की स्थिति में यदि रास्ता तलाश करनी है तो हमें *लोहिया की लालटेन* को साथ लिए चलना ही होगा'' (सुनील, 2010)।

डॉ0 लोहिया अपने जाति सम्बन्धी चिन्तन में जाति के विनाश की बात करते हैं, तो दूसरी ओर पिछड़ी, दलित, महिला और आदिवासियों को विशेष अवसर देकर उन्हें

आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से सम्पन्न बनाना चाहते हैं। एक ओर वे जाति तोड़ने के लिए आन्दोलन के विविध आयामों की चर्चा करते है, तो दूसरी ओर पिछड़ी जातियों को सत्ता दिलाने के लिए विशेष अवसर की वकालत करते हैं। उनका तर्क है कि जिस तरह किसी पिछड़े क्षेत्र को विकसित करने के लिए विशेष व अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता होती है, उसी तरह पिछड़े लोगों को विशेष अवसर देकर उन्हें भी विकसित करने की आवश्यकता है।

दलितों एवं अवसरों से वंचित जातियों को संगठित करने का लोहिया का नया सिद्धान्त पिछड़ी जातियों के मन में ऐसी चेतना और इच्छा जगाने में सफल रहा जिससे कि वे सत्ता और राजनीति पर उच्च जातियों के अधिकार के विरुद्ध सशक्त राजनीतिक शक्ति के रूप में खड़े हो सके। लेकिन यह महत्वपूर्ण प्रश्न बिना उत्तर के ही रह गया कि जनजागृति का यह नया सिद्धान्त भारतीय समाज में जाति प्रथा की बुराइयों को किस प्रकार समाप्त करेगा।

सन्दर्भ सूची–

मूल ग्रन्थ

1. लोहिया, राम मनोहर (1952). *दि कास्ट सिस्टम.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
2. लोहिया, राम मनोहर (1953). ''दि टू सेग्रिगेशन्स ऑफ कास्ट एण्ड सेक्स''. *इसेशियल लोहिया.* जनवरी. पृ0 362–369.
3. लोहिया, राम मनोहर (1954). *हिन्दू बनाम हिन्दू.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
4. लोहिया, राम मनोहर (1954). *जाति प्रथा.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
5. लोहिया, राम मनोहर (1955). *इतिहास चक्र.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
6. लोहिया, राम मनोहर (1962). ''निराशा के कर्तव्य''. *डॉ0 राम मनोहर लोहिया, कुछ चुने हुए भाषण व लेख.* हैदराबाद.
7. लोहिया, राम मनोहर (1963). *मार्क्स, गांधी एण्ड सोशलिज्म.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
8. लोहिया, राम मनोहर (1965). ''अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों का उत्थान'' (लोकसभा में भाषण, 12 मार्च 1965). सन्दर्भ ग्रन्थ– कश्यप, सुभाष (संपा0). *सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज : डॉ0 राम मनोहर लोहिया.* नई दिल्लीः लोक सभा सचिवालय. पृ0 72–74.
9. लोहिया, राममनोहर (1966). *धर्म पर एक दृष्टि.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
10. लोहिया, राम मनोहर (1966). *सात क्रान्तियाँ.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन.
11. लोहिया, राम मनोहर (1969). *समलक्ष्य, समबोध.* हैदराबाद : राम मनोहर लोहिया समता विद्यालय न्यास प्रकाशन.
12. लोहिया, राम मनोहर (2008). ''जाति–प्रथा का नाश : क्यों और कैसे''. सन्दर्भ ग्रन्थ– कपूर, मस्तराम (संपा0). *लोहिया रचनावली*. खण्ड– 2. नई दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स.
13. लोहिया, राम मनोहर (2008). ''जातिवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि''. सन्दर्भ ग्रन्थ– कपूर, मस्तराम (संपा0). *लोहिया रचनावली*. खण्ड– 2. नई दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स. पृ0 118.

सहायक ग्रन्थ

14. अंगिरा, आर0 (2021). ''राम मनोहर लोहिया : समाजवाद के मौलिक चिंतक''. *आई0जे0एच0एस0एस0आई0, 11*(8): 65–69. ऋचा अंगिरा
15. ओझा, आर0 (2010). ''लोहिया एण्ड इम्पावरमेंट ऑफ वूमेन''. *मेनस्ट्रीम, 48*(13).
16. कपूर, मस्तराम (2008). *लोहिया रचनावली*. (दो खण्डों में). नई दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स.
17. कपूर, मस्तराम (2011). *कलेक्टेड वर्क्स ऑफ डॉ0 लोहिया.* (9 वा0). नई दिल्ली : अनामिका पब्लिशर्स.
18. कश्यप, सुभाष (1990). *सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज : डॉ0 राम मनोहर लोहिया.* नई दिल्लीः लोक सभा सचिवालय.
19. कुमार, ए0 (2010). ''अण्डरस्टैंडिंग लोहियाज पॉलिटिकल सोशियोलॉजी : इंटरसेक्शनलिटी ऑफ कास्ट, क्लास, जेंडर एण्ड लैंग्वेज''. *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 45*(40): 64–70.
20. कुमार, एस0 (2019). ''महिलाएं अपनी गरिमा और आजादी चाहती हैं, तथाकथित नैतिकता या देवी का दर्जा नहीं : डॉ0 राम मनोहर लोहिया''. *गाँव कनेक्शन,* 23 मार्च.
21. केलकर, इन्दुमति (1963). *लोहिया : सिद्धान्त एवं कर्म.* हैदराबाद : नवहिन्द प्रकाशन. पृ0 18
22. गाबा, ओ0पी0 (2013). *भारतीय राजनीतिक चिंतक.* नई दिल्ली : मयुरबख्श प्रकाशन.
23. गुहा, समर (1990). '' उग्र समाजादी''. सन्दर्भ ग्रन्थ कश्यप, सुभाष (संपा0). *सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज : डॉ0 राम मनोहर लोहिया.* नई दिल्लीः लोक सभा सचिवालय. पृ0 74–80.
24. गौतम, बलवान (2013). *तुलनात्मक राजनीतिक सिद्धांत के संदर्भ.* दिल्ली : दिल्ली विश्वविद्यालय, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय.
25. दीक्षित, ताराचन्द (2013). *राममनोहर लोहिया का समाजवादी दर्शन.* इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.
26. परमेश्वरन, पी0 (1978). *गांधी, लोहिया और दीनदयाल.* नई दिल्ली : दीनदयाल रिसर्च इंस्टीट्यूट.
27. भाटिया, पी0आर0 (1997). *भारतीय राजनीतिक विचारक.* आगरा : यूनिवर्सल बुक डिपो.
28. भास्कर, ए0 (2020). ''अम्बेडकर, लोहिया एण्ड दि सेग्रिगेशन ऑफ कास्ट एण्ड जेण्डर : इनविजिनिंग ए ग्लोबल एजेण्डा फार सोशल जस्टिस''. *कास्ट : ए ग्लोबल जर्नल आन सोशल इस्क्लूजन, 1*(2): 63–72.
29. मन्त्री, गणेश (1983). *मार्क्स, गांधी और समसामयिक सन्दर्भ.* नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस.
30. यादव, के0 (2010). ''द्रोपदी आर सावित्री : लोहियाज

फेमिनिस्ट रीडिंग ऑफ मैथालॉजी''. *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 45*(48): 107–112.
31. यादव, योगेन्द्र (2012). ''अम्बेडकर एण्ड लोहिया : ए डायलॉग आन कास्ट''. *सेमिनार.* जनवरी.
32. यादव, वी0एस0 (2017). ''डॉ0 राम मनोहर लोहिया की दृष्टि में स्त्री''. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक एण्ड इन्नोवेटिव रिसर्च स्टडीज, 5*(12): 58–61.
33. यादव, वी0एस0 (2019). ''डॉ0 राम मनोहर लोहिया के विचारों की प्रासंगिकता''. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक एण्ड इन्नोवेटिव रिसर्च स्टडीज, 7*(1): 19–22.
34. रहमान, एम0के0 (2020). ''राममनोहर लोहिया का सामाजिक चिन्तन''. *जूनी ख्यात, 10*(7): 115–131.
35. रेड्डी, बी0 सत्यनारायण (1990). ''डॉ0 राम मनोहर लोहिया और समाजवाद''. सन्दर्भ ग्रन्थ कश्यप, सुभाष (संपा0). *सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज : डॉ0 राम मनोहर लोहिया.* नई दिल्लीः लोक सभा सचिवालय. पृ0 13–19.
36. वर्मा, रजनीकांत (1978). *लोहिया और औरत.* नई दिल्ली : अनामिका प्रकाशन.
37. वर्मा, वी0के0 (2023). ''मार्क्सवादी नारीवाद''. *आई0ओ0एस0आर0–जे0एच0एस0एस0, 28*(4): 64–70.
38. शरद, ओ0 (1972). *लोहिया : ए बायोग्राफी.* लखनऊ : प्रकाशन केन्द्र.
39. शरद, ओंकार (1990). *लोहिया के विचार.* इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन.
40. शर्मा, यज्ञदत्त (1990). ''सच्चे समाज–सुधारक – डॉ0 लोहिया''. सन्दर्भ ग्रन्थ कश्यप, सुभाष (संपा0). *सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज : डॉ0 राम मनोहर लोहिया.* नई दिल्लीः लोक सभा सचिवालय. पृ0 60–62.
41. शर्मा, पारुल (2021). ''स्त्री विमर्श और समाजवादी नेता डॉ0 राम मनोहर लोहिया के विचार''. *फेमिनिज्म इन इण्डिया,* 3 सितम्बर.
42. शर्मा, पारुल (2021). ''स्त्री विमर्श और समाजवादी नेता डॉ0 राम मनोहर लोहिया के विचार''. *फेमिनिज्म इन इण्डिया,* 3 सितम्बर.
43. सिंह, आर0 (2017). ''डॉ0 लोहिया की दृष्टि में नारी''. *देशबन्धु,* 22 मार्च, बुधवार. नई दिल्ली.
44. सिंह, जे0बी0 (2015). ''वर्तमान समय में डॉ0 राममनोहर लोहिया के समाजवादी दर्शन के सप्तक्रांति सिद्धांत की प्रासंगिकता''. *क्विस्ट जर्नल्स, 3*(8): 54–57.
45. सुनील (2010). ''लोहिया की लालटेन''. सम्पादकीय. *जनसत्ता,* 20 अक्टूबर, लखनऊ.
46. त्रिपाठी, ए0 (2011). ''स्त्री मुक्ति : लोहिया की आवाज''. *कथा क्रम, अप्रैल–जून* : 40.

****